दैनिक भास्कर

Date: 04-06-24

वक्त आ गया है कि एआई की दौड़ में भारत पीछे न रहे

संपादकीय

टेक्नोलॉजी समाज में धीरे से लेकिन असाधारण क्रांति करती रही है। लेकिन आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस / मशीन लर्निंग (एआई/ एमएल) के बारे अभी भी केवल अनुमान लगाया जा सकता है कि यह मानव जीवन में क्या, कितना और कैसे परिवर्तन करेगी। जाहिर है यह परिवर्तन, व्यक्ति और समाज के स्तर पर ही नहीं संस्थागत, आर्थिक और गवर्नेंस के स्तर पर भी गुणात्मक के साथ संख्यात्मक भी होगा। जो देश इस दौड़ में आगे होंगे, वे अगले कई दशकों के लिए दुनिया का नेतृत्व करेंगे। खुशी की बात यह है कि भारत इस दौड़ में शामिल है, भले ही एआई के कुछ क्षेत्रों में इसकी रफ्तार कम हो । आज देश में 54 लाख तकनीकी प्रशिक्षित लोग हैं यानी चीन और अमेरिका के समकक्ष हैं। लेकिन पिछले दस वर्षों में भारत में निजी कंपनियों ने पूंजी लगाने में चीन और अमेरिका के मुकाबले भारी कोताही की है, जिसके कारण प्रतिभा में अग्रणी रहने के बावजूद भारत निजी पूंजी निवेश में सातवें स्थान पर है। चीन और अमेरिका का निजी निवेश भारत से क्रमशः 13 गुना और 33 गुना ज्यादा है। आई/ एमएल का ज्ञान भारत में दुनिया के अन्य देशों के मुकाबले सस्ता भी है। चूंकि इस तकनीकी का प्रयोग ह्यूमन रिसोर्स और इंजीनियरिंग में प्रचुरता से हो रहा है और उत्पादन और सेवा के अन्य क्षेत्रों में विस्तार होने लगा है लिहाजा सरकार को ही नहीं, निजी क्षेत्र को भी इसमें निवेश के लिए आगे आना होगा। यह सोचना कि अमेरिका और चीन से ज्ञान आयात कर लेंगे, ये बेहद महंगा पड़ेगा। क्योंकि हम एक बार फिर इस टेक्नोलॉजी यूजर मात्र रह जाएंगे। पिछले सात वर्षों में लिंक्डइन के कुल सदस्यों में से बड़ी संख्या ने अपने प्रोफाइल में एआई कौशल को जोड़ा है। क्या यह ज्ञान वास्तव में इंडस्ट्री की जरूरत के अनुरूप है। देखना होगा कि यह टैलेंट नौकरी करने वाला बनता है या नौकरी देने वाला।

Date: 04-06-24

केवल पेड़ लगाने से ही कम नहीं होगी ग्लोबल वार्मिंग

प्रो. चेतन सिंह सोलंकी, (आईआईटी बॉम्बे में प्रोफेसर, संस्थापक, एनर्जी स्वराज फाउंडेशन)

पेड़ लगाना यकीनन बहुत जरूरी है और हम सभी को इसे नियमित रूप से करना चाहिए। यह हमारे और हमारे प्लैनेट के लिए भी अच्छा है। इससे कार्बन को कम करने, ऑक्सीजन के उत्पादन, जैव विविधता को बनाए रखने, मिट्टी की स्थिरता और जल-चक्र के रेगुलेशन में मदद मिलती है। अभी 10 दिन पहले ही, मैंने अपने 50वें जन्मदिन पर 50 पेड़ लगाए हैं। लेकिन इससे पहले कि हम इस विश्व पर्यावरण दिवस पर पेड़ लगाने के बारे में सोचें, थोड़ा रुकिए!

जैसे-जैसे हम 5 जून (विश्व पर्यावरण दिवस) के करीब पहुंच रहे हैं, सामाजिक संगठनों, प्रभावशाली लोगों, राजनेताओं, कॉर्पोरेट्स और व्यक्तियों को पेड़ लगाने की वकालत करते हुए देखना उत्साहजनक है। यह अच्छा है, लेकिन पर्याप्त नहीं है। यह सोचना कि पौधे लगाने से पर्यावरण-क्षरण, वायु और जल प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन जैसी मौजूदा ज्वलंत समस्याओं का समाधान हो जाएगा, एक गलती है।

अनेक युगों से, पृथ्वी की सतह और महासागरों ने स्वाभाविक रूप से कार्बन डाइऑक्साइड (सीओटू) और अन्य ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन और अवशोषण किया है, जिससे वायुमंडल के भीतर एक नाजुक संतुलन बना रहा है। यह प्राकृतिक चक्र मनुष्यों के अस्तित्व में आने से पहले का है।

औद्योगीकरण की शुरुआत से पहले तक- यानी लगभग 1850 ई. में- सीओटू उत्सर्जन और अवशोषण की दर संतुलन में थी। लेकिन उसके बाद हमने कोयला, पेट्रोल, डीजल और एलपीजी जलाना शुरू कर दिया, जिससे सीओटू उत्सर्जन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। वर्तमान में, मानवीय गतिविधियां सालाना लगभग 38 अरब टन अतिरिक्त सीओटू का वायुमंडल में योगदान कर रही हैं। जब यह प्रवाह पृथ्वी की इसे अवशोषित करने की क्षमता को पार कर जाता है, तो प्राकृतिक कार्बन चक्र का नाजुक संतुलन बिगड़ जाता है। पृथ्वी की सतह और महासागर, साथ ही पौधे और पेड़, सीओटू को अवशोषित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालांकि औद्योगिक गतिविधियों से सीओटू उत्सर्जन की विशाल मात्रा इसे प्रभावी रूप से संतुलित करने की उनकी क्षमता को प्रभावित करती है। नतीजतन, वातावरण में सीओटू की अधिकता हो जाती है, जिससे ग्रीनहाउस प्रभाव होता है। पूर्व-औद्योगिक युग की तुलना में वर्तमान में वायुमंडल में 52% अतिरिक्त सीओटू है। इसका मतलब है कि उसमें प्लैनेट की गर्मी को ट्रैप करने की 52% अतिरिक्त क्षमता है।

वर्तमान की हीटवेव इसी अतिरिक्त गर्मी का परिणाम हैं। एक पेड़- आमतौर पर 10-15-20 साल के विकास के बाद- अपने जीवनकाल के दौरान लगभग 1 से 2 टन सीओटू अवशोषित करता है। मान लें कि 10 वर्षों में एक पेड़ लगभग 1 टन सीओटू सोखता है तो मानवीय गतिविधियों के कारण प्रतिवर्ष उत्सर्जित होने वाली अतिरिक्त 38 अरब टन सीओटू को संतुलित करने के लिए हमें हर साल लगभग 380 अरब पेड़ लगाने होंगे।

अगर मानें कि एक पेड़ के लिए लगभग 10 वर्ग मीटर क्षेत्र की आवश्यकता होती है तो प्रति वर्ष 380 अरब पेड़ लगाने के लिए लगभग 30.8 लाख वर्ग किलोमीटर यानी भारत के आकार से भी बड़े क्षेत्र की आवश्यकता होगी, और वह भी हर साल। व्यक्तियों के लिए भी, वृक्षारोपण के माध्यम से सीओटू की भरपाई करना संभव नहीं होगा। एसी जैसे सामान्य स्रोतों से होने वाले कार्बन उत्सर्जन पर विचार करें।

एक टन का एयर कंडीशनर दिन में सिर्फ 8 घंटे चलने पर एक वर्ष में 2 टन से अधिक सीओटू उत्सर्जित करता है। इसलिए सिर्फ एक एसी के कार्बन फुटप्रिंट को संतुलित करने के लिए हमें सालाना 1 से 2 पेड़ लगाने की जरूरत है। वास्तव में उत्सर्जन की भरपाई के लिए पेड़ लगाने की नहीं, बल्कि 10-15 साल तक उनका पालन-पोषण करने की भी जरूरत है। यदि कोई व्यक्ति वाहन का उपयोग करता है और प्रतिदिन सिर्फ 2 लीटर पेट्रोल या डीजल जलाता है, तो वह एक वर्ष में 2 टन से अधिक सीओटू उत्सर्जित करने के लिए जिम्मेदार होगा। इस प्रकार, वाहनों के उपयोग के पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के लिए भी सालाना 1 से 2 नए पेड़ लगाना होंगे।

आधुनिक युग में, व्यक्ति प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से बहुत अधिक मात्रा में ऊर्जा और सामग्रियों का उपभोग करते हैं। केवल पेड़ लगाकर पर्यावरण पर पड़ने वाले उनके प्रभाव को कम करने का प्रयास लगभग असंभव होगा।

हर किसी के लिए आवश्यक मात्रा में पेड़ लगाना और उनकी देखभाल करना संभव नहीं है, न ही इस तरह के प्रयासों के लिए पर्याप्त जगह उपलब्ध है। इससे ज्यादा समझदारी का दृष्टिकोण तो यह होगा कि 'रोकथाम इलाज से बेहतर है!' यानी हमें पर्यावरण-संबंधी चुनौतियों का प्रभावी ढंग से समाधान करने के लिए कार्बन उत्सर्जन और संसाधनों की खपत को कम करने के व्यापक उपायों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 04-06-24

जलवायु परिवर्तन की चुनौती

संपादकीय

मौसम के उतार-चढ़ाव की बढ़ती घटनाएं और देश के अधिकांश भागों में लू के थपेड़े हमें यह याद दिला रहे हैं कि जलवायु कितनी तेजी से बदल रही है और भारत जैसे देश पर इसका क्या असर हो सकता है। भारत अपने ऊर्जा मिश्रण में नवीकरणीय ऊर्जा की हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए निवेश कर रहा है, लेकिन जलवायु परिवर्तन की समस्या को विकासशील देश अपने ही स्तर पर हल नहीं कर सकते हैं। ध्यान देने वाली बात है कि विकसित देशों ने विकासशील देशों को वित्तीय सहायता मुहैया कराने की प्रतिबद्धता भी जताई है। इस संदर्भ में आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन की एक नई रिपोर्ट इस बात को रेखांकित करती है कि वर्षों तक जलवायु वित्त प्रतिबद्धताओं के मामले में पिछड़ने के बाद विकसित देश आखिरकार 2022 में विकासशील देशों के लिए 115.9 अरब डॉलर की राशि जुटाने में कामयाब रहे जो 100 अरब डॉलर के वार्षिक लक्ष्य से अधिक रही। यह लक्ष्य 2020 के लिए तय किया गया था लेकिन दो वर्ष बाद यानी 2022 में इसे हासिल करने में कामयाबी मिली। इस वादे को पूरा करने में हुई देरी के कारण नाराजगी पैदा हुई और विकासशील देशों के मन में भविष्य की जलवायु फंडिंग के वादों को लेकर संदेह भी पैदा हुआ। ऐसे में तय लक्ष्य को पार करने को एक छोटा लेकिन अहम कदम बताया जा रहा है जो विकासशील देशों को जलवायु परिवर्तन से निपटने के क्रम में मजबूती प्रदान करेगा।

वर्ष 2009 में कोपेनहेगन में आयोजित जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में विकसित देशों ने 2020 तक हर वर्ष 100 अरब डॉलर का फंड जुटाने की प्रतिबद्धता जताई थी। इसके बाद 2015 में पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर के समय ये देश इस बात पर सहमत हुए कि 2025 तक मिलकर 100 अरब डॉलर की राशि जुटाई जाएगी और उसके बाद एक नया सामूहिक परिमाणित लक्ष्य तय किया जाएगा। यह नया लक्ष्य शायद इस वर्ष अजरबैजान में कॉन्फ्रेंस ऑफ पार्टीज (COP29) में अपना लिया जाए। वर्ष 2022 में जो कुल राशि जुटाई गई उसमें 80 फीसदी हिस्सेदारी सार्वजनिक जलवायु वित्त (द्विपक्षीय और बहुपक्षीय) की है। निजी जलवायु वित्त हाल के दिनों में तेजी से बढ़ा है लेकिन अभी भी यह सार्वजनिक स्रोतों से हासिल फंड की तुलना में काफी कम है। कुल जलवायु वित्त का करीब 60 फीसदी उत्सर्जन कम करने के उपायों पर केंद्रित है। खासतौर पर ऊर्जा और परिवहन क्षेत्र में। जलवायु अनुकूल उपायों को अपनाने के लिए जुटाई गई राशि काफी कम है।

बहरहाल, अधिकांश सहयोग ऋण के रूप में है, न कि अनुदान और इक्विटी निवेश के रूप में। यह जलवायु न्याय की अवधारणा के खिलाफ है। जलवायु वित्त का अधिकांश हिस्सा चूंकि ऋण के रूप में है इसलिए इसका बड़ा अंश गैर रियायती प्रकृति का है। इससे अधिकांश क्षेत्रों और आय समूहों पर ऋण का दबाव बढ़ता है। विकासशील देशों में भी कम और मध्य आय वाले देश इसके मुख्य लाभार्थी बने रहते हैं। उसके बाद उच्च मध्य आय वाले देश आते हैं। दुर्भाग्यपूर्ण बात यह भी है कि 100 अरब डॉलर प्रति वर्ष की राशि पेरिस समझौते के अनुरूप जलवायु लक्ष्य हासिल करने में विकासशील देशों की कुछ खास मदद नहीं करती नजर आती। संयुक्त राष्ट्र के जलवायु परिवर्तन कन्वेंशन के वित्तीय मदद संबंधी ताजा विश्लेषण के मुताबिक विकासशील देशों को 2030 तक करीब छह लाख करोड़ डॉलर की आवश्यकता होगी। यह राशि भी उनके मौजूदा राष्ट्रीय निर्धारित सहयोग की आधी जरूरत ही पूरी कर पाएगी।

स्पष्ट है कि 100 अरब डॉलर का लक्ष्य जरूरत पर आधारित नहीं था। इसके बजाय इसने एक राजनीतिक प्रतिबद्धता के रूप में काम किया जिसने विकासशील देशों को सहायता प्रदान करने की विकसित देशों की प्रतिबद्धता को चिह्नित किया। जीवाश्म ईंधन परियोजना को वित्तीय मदद भी जारी है। इस क्षेत्र में नई कंपनियों को सालाना एक लाख करोड़ डॉलर तक की राशि दी जा रही है। इससे जलवायु वित्त पोषण को लेकर प्रश्न पैदा होते हैं। विभिन्न देशों के लिए यह आवश्यक है कि वे पहले पर्यावरण के लिए नुकसानदेह परियोजनाओं के बारे में कुछ बुनियादी बातों पर सहमति बनाएं। इसमें डॉलर में राशि से लेकर हर देश की हिस्सेदारी तक शामिल हैं।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 04-06-24

सबक सीख आगे बढ़े चुनाव आयोग

ओपी रावत, (पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त)

किसी भी निर्वाचन-प्रक्रिया का अंतिम अहम हिस्सा है मतगणना। चुनाव आयोग ने इसके बारे में बहुत विस्तार से दिशा-निर्देश जारी किए हैं, जिनको समयानुकूल अपडेट भी किया जाता रहा है। इस बार नतीजों से एक दिन पहले आयोग ने प्रेस कॉन्फ्रेंस भी की, जिसमें मतदाताओं की संख्या बताने के साथ-साथ सुचारु मतगणना-कार्य को लेकर चर्चा की गई। दो सीख मिलने की बात भी मुख्य चुनाव आयुक्त ने कही, जिनमें पहली है- तेज गरमी में मतदान नहीं कराना चाहिए था, बल्कि इसे एक महीना पहले खत्म किया जा सकता था। और दूसरा सबक, आयोग अपने खिलाफ तैयार किए जा रहे फेक नैरेटिव से अब किस तरह लड़ेगा।

इस संवाददाता सम्मेलन की जरूरत इसलिए भी महसूस हुई, क्योंकि वोटर टर्नआउट, यानी मतदाताओं की असली संख्या को लेकर बार-बार सवाल उठे हैं। ऐसा इसलिए हुआ, क्योंकि इस बार चुनाव आयोग ने 'वोटर टर्नआउट' नामक एक एप बनाया, जिसके जरिये मतदान के आंकड़े तत्काल मुहैया कराने के दावे किए गए थे। यह फॉर्म 17-सी जैसा था, जिसमें मतों का पूरा लेखा होता। इस एप को लेकर लोगों में शुरू-शुरू में उत्साह तो खूब रहा, लेकिन यह समय पर अपडेट नहीं हो सका, क्योंकि मतदानकर्मियों की पहली प्राथमिकता चुनाव कराने की होती है और उनको बाकी काम तुलनात्मक रूप से कमतर लगते हैं। चूंकि एप में आंकड़े अपडेट नहीं हुए, और आंकड़े भी कभी प्रतिशत, तो कभी अंक में दिए गए, इसलिए मत-प्रतिशत को लेकर कुछ विवाद पैदा हो गया।

निस्संदेह, फॉर्म-17(सी) किसी चुनाव का काफी महत्वपूर्ण दस्तावेज होता है, क्योंकि इसी से तय होता है कि मतदान-केंद्र पर जो ईवीएम इस्तेमाल की गई, वह सही है और उसमें उतने ही वोट पड़े हैं, जितने की गिनती हुई है। यह 'क्रॉस चेकिंग' का बड़ा औजार है। चूंकि चुनाव आयोग पर कोई सवाल न उठे, इसलिए यह अनिवार्य किया जाता है कि फॉर्म-17 (सी) और डाले गए वोटों का मिलान हो और सभी काउंटिंग टेबल पर तमाम एजेंट इससे पूरी तरह संतुष्ट हों। हां, यदि ईवीएम सही परिणाम नहीं दिखा पा रही, तो उसे रिटर्निंग ऑफिसर, यानी पीठासीन अधिकारी को वापस सौंप दिया जाता है, लेकिन अन्य टेबलों पर ईवीएम से वोटों की गिनती बदस्तूर जारी रहती है। अंत में, जब प्रत्याशियों की हार-जीत का अंतर उस ईवीएम में पड़े कुल वोटों से अधिक पाया जाता है, तो उसे किनारे कर दिया जाता है, अन्यथा उसमें दर्ज आंकड़ों को फिर से जुटाने की कोशिश होती है।

मतगणना का कार्य बहुत ही संवेदनशील होता है। मतगणना-स्थल पर तनाव कम करने के हरसंभव प्रयास किए जाते हैं। गड़बड़ी दिखते ही उसके निराकरण की तत्काल व्यवस्था की जाती है। सुप्रीम कोर्ट ने भी इसीलिए सभी निर्वाचन-क्षेत्रों के हर विधानसभा क्षेत्रों के पांच मतदान-केंद्रों पर वीवीपैट के मिलान की व्यवस्था की है। यह काम बहुत मुस्तैदी से किया जाता है। यहां तक कि वीवीपैट पर्चियों को उन स्थानों पर गिना जाता है, जहां तेज हवा का झोंका न आए, क्योंकि छोटी-छोटी पर्चियां हवा में उड़ सकती हैं और संबंधित मतदान केंद्र पर पड़े वोटों की संख्या से मिलान प्रभावित हो सकता है। इससे चुनाव आयोग की विश्वसनीयता पर सवाल खडे हो सकते हैं, इसलिए आयोग इसको लेकर विशेष संजीदा रहता है।

पहले चुनाव मतपत्रों से होते थे, तो सुबह आठ बजे से शुरू हुई मतगणना अगले दिन सुबह चार बजे तक भी चलती रहती थी। उस समय मतपत्रों की गिनती सीधे नहीं होती थी, बल्कि मतपेटियों से सभी मतपत्रों को एक जगह निकालकर

25-25 का बंडल बनाया जाता था और फिर उसे आपस में मिलाकर हर टेबल पर बांट दिया जाता था। इससे यह पता नहीं चल पाता कि किस मतदान-केंद्र का मतपत्र किस टेबल पर आया है। यह बेशक एक लंबी और थकाऊ प्रक्रिया थी, पर ऐसा करना अनिवार्य समझा गया था, क्योंकि जब टीएन शेषन मुख्य चुनाव आयुक्त थे, तो उन्होंने यह महसूस किया था कि विजेता प्रत्याशी आमतौर पर उन मतदान-केंद्रों के मतदाताओं के प्रति रूखा व्यवहार रखता था, जहां से उसे कम वोट मिले होते हैं। विजेता प्रत्याशियों की इसी दुर्भावना की काट उन्होंने मतपत्रों को आपस में मिलाने और 25-25 के बंडल में हर टेबल पर बांटने के रूप में निकाली थी।

वैसे, मतों की गिनती के इस कार्य में मील का पत्थर सिर्फ यही एक प्रयास नहीं है। पहले के दो आम चुनावों में, यानी 1952 और 1957 के लोकसभा चुनावों में उम्मीदवारों के नाम की मतपेटी रखी जाती थी और मतदाता अपने चुनिंदा प्रत्याशी की मतपेटी में पर्ची गिरा देते थे, जिनकी गिनती करके नतीजे का एलान किया जाता था। बाद में मतपत्रों की व्यवस्था की गई, लेकिन शुरुआती दौर में मतदान-केंद्रों के आधार पर मतपत्रों की गिनती होती थी, जिसे टीएन शेषन ने बदल दिया। ईवीएम ने मतगणना के कार्य को काफी आसान बना दिया। इसमें छह-सात घंटों में ही परिणाम आने लगा। इसके बाद सुब्रमण्यम स्वामी की एक याचिका के बाद वीवीपैट की व्यवस्था शुरू हुई, ताकि मतदाता को पता चल सके कि उसने जिस प्रत्याशी के नाम का बटन दबाया है, वोट उसे ही मिला है। फिर, हरेक विधानसभा क्षेत्र के एक मतदान केंद्र की वीवीपैट पर्ची मिलाने की व्यवस्था की गई, जिसे बढ़ाकर अब प्रत्येक विधानसभा क्षेत्र के पांच-पांच मतदान केंद्रों तक कर दिया गया है।

जब मुकाबला कड़ा होता है, तब मतों की गिनती काफी चुनौतीपूर्ण कसरत मानी जाती है। आयोग पर इसकी जवाबदेही बढ़ जाती है कि प्रत्याशियों के संदेह का तत्काल निराकरण हो। आयोग इसमें सफल रहा है, इसलिए उसकी साख पूरी दुनिया में है। जितने मत यूरोप व अमेरिका में डाले जाते हैं, उनसे कहीं अधिक भारत में मतदान होता है। यहां पश्चिमी देशों की तरह मतदाताओं में साक्षरता नहीं है, फिर भी हमारे यहां चुनाव ऐतिहासिक होते हैं और सभी पार्टियां नतीजों को स्वीकार करती हैं। नतीजों के खिलाफ याचिकाएं भी नाममात्र की डाली जाती हैं। इसकी वजह यही है कि आयोग आपत्तियों का निपटारा करने में सक्षम है। इस बार भी यदि किसी प्रत्याशी को आपत्ति हो और वह प्रथम दृष्टया अपने आरोपों का तथ्यात्मक आधार देने में सफल होता है, तो उसकी शिकायत पर पीठासीन अधिकारी तत्काल कार्रवाई करेगा। संतुष्ट न होने पर चुनाव आयोग को प्रतिवेदन भी भेजा जा सकेगा।